इकाई 17 शासन के अंगः कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका

इकाई की रूपरेखा

17.0 उद्देश्य
17.1 प्रस्तावना
17.2 शासन के अंग
17.3 कार्यपालिका
  17.3.1 कार्यपालिका का अर्थ और उसके प्रकार
  17.3.2 कार्यपालिका की संरचना
  17.3.3 कार्यपालिका के कार्य
  17.3.4 कार्यपालिका की बढ़ती भूमिका
17.4 विधायिका
  17.4.1 जनता का प्रतिनिधित्व
  17.4.2 विधायिका का गठनः एकसदनीय और दोसदनीय
  17.4.3 विधायिका के कार्य
  17.4.4 विधायिका का ह्रास
17.5 न्यायपालिका
  17.5.1 न्यायपालिका के कार्य
  17.5.2 न्यायिक समीक्षा और न्यायिक सक्रियता
  17.5.3 न्यायपालिका की स्वतंत्रता
17.6 सारांश
17.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें
17.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

17.0 उद्देश्य

इस इकाई में हम आधुनिक सरकारों के तीन प्रमुख कार्यों अर्थात् विधि-निर्माण, प्रशासन और न्याय की विवेचना करेंगे। इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात्, आप

- आधुनिक सरकारों के तीन प्रमुख अंगों को स्पष्ट कर सकेंगे;
- कार्यपालिका की संरचना और उसके प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे;
- विधायिका के गठन को समझा सकेंगे;
- राष्ट्रीय आन्दोलनों की विचारधाराओं की समीक्षा कर सकें;
- कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका के कार्यों का विश्लेषण कर सकेंगे;
- विधायिका के ह्रास और कार्यपालिका की बढ़ती भूमिका का वर्णन कर सकेंगे; और
- यह स्पष्ट कर सकेंगे कि न्यायपालिका की स्वतंत्रता कैसे सुनिश्चित की जाती है।

17.1 प्रस्तावना

प्रत्येक सभ्य समाज कारगर और दक्ष शासन की आशा करता है। यह भूमिका सरकार निभाती है जो राज्य के चार बुनियादी तत्वों में एक होती है। कोई भी राज्य एक सरकार के बिना संभव नहीं। सरकार सिर्फ जनता की सुरक्षा ही नहीं करती, उनकी बुनियादी जरूरतें भी पूरा करती है और उनका सामाजिक-आर्थिक विकास सुनिश्चित करती है। इस तरह हम कह सकते हैं कि एक सरकार संस्थाओं का समूह होती है जो कानूनी उपायों से नियंत्रण का काम करती है तथा कानून

तोड़नेवालों को दंड देती है। इसके लिए आवश्यक है कि सरकार की जनता को नियंत्रित करने की शक्ति को जनता स्वैच्छा से सामाजिक स्वीकृति और मान्यता दे। एक सरकार आमतौर पर अपने कार्यों को अपने अंगों में विभाजित कर देती है और प्रत्येक अंग कुछ विशेष कार्य करता है। सरकार मुख्यतः तीन प्रकार के कार्य करती है - **कानून बनाना, कानूनों को लागू करना और विवादों का निपटारा करना**।

इस इकाई में शासन के तीन प्रमुख अंगों को, उनके कार्यों को और उनसे जुड़े विभिन्न प्रावधानों को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है। यह किसी शासन के विभिन्न अंगों के संबंध को भी स्पष्ट करती है। ऊपर शासन के जो तीन कार्य बतलाए गए हैं उनसे संबंधित अंग हैं - कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका।

17.2 शासन के अंग

जैसा कि कहा गया है कि किसी शासन के तीन अंग होते हैं - **विधायिका** जो कानून बनाती है, **कार्यपालिका** जो उन्हें लागू करती है, तथा **न्यायपालिका** जो कानूनों की व्याख्या और विवादों का निपटारा करती है। शासन के इन अंगों का ढाँचा इस तरह का होता है कि वे समुचित ढंग से अपने कार्य पूरे कर सकें। किसी शासन के तीन अंगों के बीच शक्ति-विभाजन की इस व्यवस्था को **'शक्तियों का अलगाव'** कहते हैं। यह राजनीतिक व्यवस्था **अमेरिका** में सबसे अधिक बलवती है। वहाँ कांग्रेस कानून बनाती है, राष्ट्रपति उन्हें लागू करता है, तथा सर्वोच्च न्यायालय व दूसरे संघीय न्यायालय उनकी व्याख्या करते और न्याय देते हैं। शासन के ये तीनों अंग एक दूसरे से स्वतंत्र होते हैं। विधायिका में जनता के प्रतिनिधि होने चाहिए क्योंकि वे सबसे महत्वपूर्ण काम करते हैं - ऐसे कानून बनाना जिनसे जनता शासित हो। इस तरह विधायिका में जनता का निष्पक्ष और व्यापक प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने के प्रयास किए जाते हैं। कार्यपालिका विधायिका के बनाए कानूनों को लागू करती है। इसलिए कार्यपालिका में सक्षम और दस लोगों को होना आवश्यक है। सरकार का तीसरा अंग न्यायपालिका है जो कानूनों की व्याख्या करती है तथा इन कानूनों और संविधान के अनुसार मुकद्दमों का फैसला करती है।

17.3 कार्यपालिका

17.3.1 कार्यपालिका का अर्थ और उसके प्रकार

कार्यपालिका सरकार का कार्यकारी अंग है। कार्यपालिका ही विभिन्न नीतियों का निर्धारण और फिर क्रियान्वयन करती है। 'कार्यपालिका' शब्द का शाब्दिक अर्थ महत्वपूर्ण निर्णयों पर अमल करने, अर्थात् उन्हें लागू करने की शक्ति है। **जे. डब्ल्यू गार्नर** कहते हैं: 'एक व्यापक और सामूहिक अर्थ में कार्यपालिका वाले अंग में ..... वे सभी कार्यकारी और संगठन शामिल हैं जिनका सरोकार राज्य की इच्छा से है जो कानूनों के रूप में निर्धारित और व्यक्त होती है ... इस तरह यह सरकार के पूरे संगठन को समेटती है। इस तरह कर वसूल करने वाले, निरीक्षक, आयुक्त, पुलिस वाले तथा शायद सेना और नौसेना के अधिकारी भी कार्यपालिका के संगठन के अंग होते हैं।'

'कार्यपालिका' शब्द के व्यापक और संकीर्ण, दोनों प्रकार के अर्थ होते हैं। मगर राजनीतिक अध्ययन के क्षेत्र में इसके संकीर्ण अर्थ का ही व्यवहार किया जाता है। कार्यपालिका का प्रमुख और उसके मुख्य सहकर्मी ही सरकार के तंत्र को चलाते हैं, राष्ट्रीय नीतियों का निर्धारण करते हैं और यह सुनिश्चित करते हैं कि वे नीतियाँ सही ढंग से लागू हों।

निम्नलिखित तालिका विश्व में 'कार्यपालिका' के विभिन्न प्रकारों को दर्शाती है:

कुछ व्यस्थाओं में या तो राजा या निर्वाचित राष्ट्रपति एक नाम-मात्र कार्यपालिका हो सकता है। उसे 'नाम-मात्र' बनाने वाला तथ्य यह है कि उसे यथार्थ शक्तियाँ प्राप्त नहीं होतीं। वह मात्र एक सांविधानिक प्रमुख होता है जो कुछ आलंकारिक कार्य करता है पर जिसे मामूली

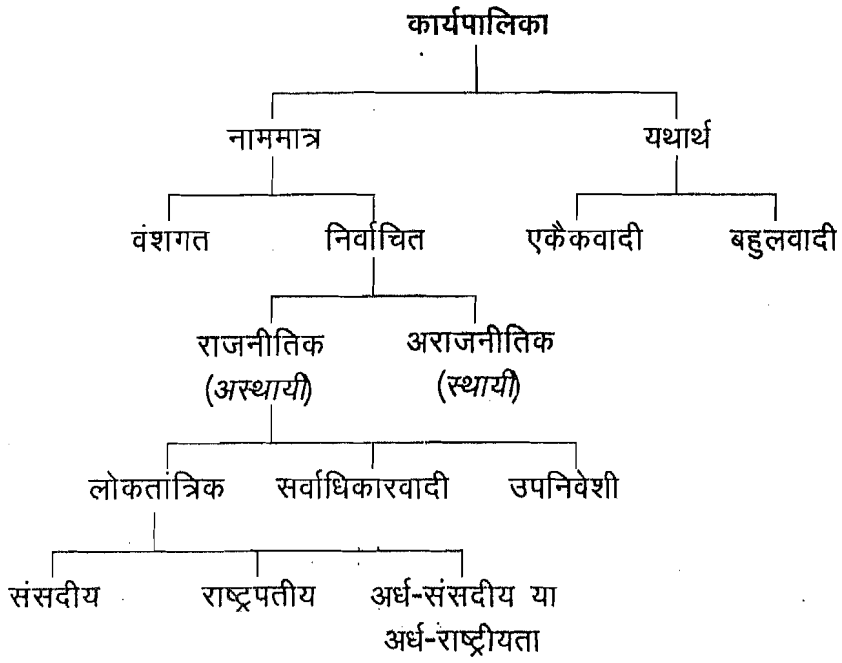

शक्तियाँ ही प्राप्त होती हैं या नहीं होतीं। वैसे पूरा प्रशासन उसी के नाम से चलाया जाता है। राजा या तो ग्रेट ब्रिटेन की तरह वंशगत होता है या मलेशिया की तरह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष ढंग से निर्वाचित होता है। ग्रेट ब्रिटेन, नेपाल, जापान और सऊदी अरब जैसे कुछ देशों में वंशगत उत्तराधिकार की प्रथा अभी भी प्रचलित है। जहाँ ग्रेट ब्रिटेन की तरह संविधानिक राजतंत्र है वहाँ यथार्थ शक्ति राजा या रानी के हाथों में नहीं, निर्वाचित मंत्रिपरिषद के हाथों में होती है। इसका प्रमुख प्रधानमंत्री होता है और मंत्रिपरिषद विधायिका के आगे जबावदेह होती है।

लेकिन दुनिया के सभी राजा नाम-मात्र प्रमुख नहीं हैं। अभी भी ऐसे राजा हैं जिन्हें पूरी शक्तियाँ प्राप्त हैं, जैसे **जोर्डन** और **सऊदी अरब** में। कुछ राजाओं को **'यथार्थ' कार्यपालिका** की श्रेणी में रखा जा सकता है क्योंकि उन्हें निरपेक्ष और असीमित शक्तियाँ प्राप्त हैं।

यथार्थ कार्यपालिका को दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है - **एकैकवादी (सिंगुलर)** और **बहुलवादी** (प्ल्यूरल)। **एकैकवादी** कार्यपालिका वह है जिसमें प्रमुख एक ही व्यक्ति होता है और दूसरे उसकी शक्तियों में भागीदार नहीं होते, जैसे अमेरिका में। वहाँ संविधान ने एक ही व्यक्ति अर्थात् राष्ट्रपति को सारे अधिकार दे रखे हैं। **बहुलवादी** कार्यपालिका में सभी शक्तियाँ एक मंत्रिसमूह के हाथों में होती है। आज की दुनिया में इसका एकमात्र उदाहरण स्विटजरलैण्ड है जहाँ सरकार की सत्ता सात मंत्रियों (प्रेसिडेंट्स) के हाथों में होती है जो विधायिका द्वारा चार वर्षों के लिए चुने जाते हैं। इसे **फेडरल कौंसिल** (संघीय परिषद्) कहा जाता है। प्रेसिडेंट्स में से एक को महासंघ का औपचारिक राष्ट्रपति चुना जाता है और वह वे सभी आलंकारिक कर्तव्य निभाता है जो किसी देश में सामान्यतः राज्य प्रमुख द्वारा निभाए जाते हैं।

17.3.2 कार्यपालिका की संरचना

कार्यपालिका आमतौर पर दो प्रकार के अधिकारियों से बनी होती है: (अ) राजनीतिक कार्यपालिका, अर्थात् राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मंत्रिमंडल या मंत्रिपरिषद्, और (ब) स्थायी कार्यपालिका अर्थात् नौकरशाही जिनका कार्यकाल, चाहे जो भी सरकार सत्ता में आए, स्थिर होता है। **राजनीतिक कार्यपालिका** या तो **अमेरिका** की तरह **सीधे** जनता द्वारा चुनी जाती है जहाँ राष्ट्रपतीय शासन-

प्रणाली है या भारत व ग्रेट ब्रिटेन की तरह अप्रत्यक्ष रूप से, विधायिका द्वारा चुनी जाती है। **चीन** में राष्ट्रपति राष्ट्रीय जन कांग्रेस द्वारा निर्वाचित होता है। वही राज्य का प्रमुख और राज्य का सर्वोच्च अधिकारी होता है।

जैसा कि ऊपर दी गई तालिका से स्पष्ट है, राजनीतिक कार्यपालिका की भी तीन श्रेणियाँ होती हैं। लोकतंत्र में सदस्य जनता द्वारा चुने जाते हैं और अपने निर्वाचकों के आगे जवाबदेह होते हैं। उदाहरण के लिए ब्रिटेन में मंत्रिमंडल **हाउस ऑफ कामंस** के नकारात्मक मत के कारण सत्ता के बाहर हो जाता है। अमेरिकी राष्ट्रपति भी सत्ता से हटाया जा सकता है मगर अविश्वास प्रस्ताव नहीं बल्कि महाभियोग की प्रक्रिया के द्वारा। हाल ही में अमेरिका में राष्ट्रपति बिल क्लिंटन पर महाभियोग चलाया गया पर वे बच निकले क्योंकि सीनेट उन्हें दंड देने में असमर्थ रही।

एक सर्वाधिकारवादी राज्य में वास्तविक कार्यपालिका को जनता या उसके निर्वाचित प्रतिनिधि नहीं हटा सकते। ऐसे राज्य में जनता को सरकार के कामों की आलोचना या भर्त्सना करने की स्वतंत्रता प्राप्त नहीं होती। आज बर्मा, इराक, नाइजीरिया और अफगानिस्तान में ऐसे ही सर्वाधिकारवादी राज्य हैं जिनमें कार्यपालिका को निरपेक्ष शक्तियाँ प्राप्त हैं। इससे पहले हिटलर के नाज़ी जर्मनी और मुसोलिनी के फासीवादी इटली में ऐसे ही सर्वाधिकारवादी शासन रह चुके हैं।

अंत में, *एक उपनिवेशी कार्यपालिका वह है जो उपनिवेशी सरकार के अधीन काम करती है।*

लोकतांत्रिक मॉडल को दो श्रेणियाँ में बाँटा जा सकता है - **संसदीय** व **राष्ट्रपतीय शासन प्रणालियों** में। संसदीय प्रणाली में भारत और ग्रेट ब्रिटेन की तरह सरकार को (प्रधानमंत्री के नेतृत्व में) एक मंत्रिपरिषद् चलाती है जो सामूहिक रूप से विधायिका के आगे जवाबदेह होती है। राज्य का प्रमुख नाम-मात्र का कार्यपालक होता है जिसके नाम से मंत्रिपरिषद् शासन करती है। भारत में राष्ट्रपति व ग्रेट ब्रिटेन में रानी नाम-मात्र के ही राज्य प्रमुख हैं। दूसरे प्रकार का लोकतांत्रिक मॉडल राष्ट्रपतीय शासन प्रणाली है, जैसा कि अमेरिका में है। वहाँ शक्तियों का बंटवारा कार्यपालिका-विधायिका-संबंध का आधार है। वास्तविक कार्यपालक राष्ट्रपति होता है। वह न तो विधायिका का सदस्य होता है न विधायिका उसे हटा सकती है। उसका कार्यकाल निश्चित होता है।

इन दो मॉडलों के बीच फ्रांसीसी कार्यपालिका का मॉडल आता है जिसे अर्ध-संसदीय या अर्ध-राष्ट्रपतीय कह सकते हैं। वहाँ वास्तविक कार्यपालक राष्ट्रपति होता है, उसी के नियंत्रण में प्रधानमंत्री और मंत्रिमंडल होते हैं और ये साथ ही साथ संसद के आगे जवाबदेह भी होते हैं। इस तरह फ्रांसीसी मॉडल संसदीय और राष्ट्रपतीय, दोनों शासन प्रणालियों की कुछ विशेषताएँ लिए हुए है।

17.3.3 कार्यपालिका के कार्य

आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था में कार्यपालिका के प्रभुत्व में अविश्वास की जगह उसके नेतृत्व में एक विश्वास पैदा हुआ है। आज शासन के तीन अंगों की समान शक्तियों के शास्त्रीय सिद्धान्त का पुनर्निरूपण आवश्यक है क्योंकि कार्यपालिका सही अर्थों में सरकार बन चुकी है। कार्यपालिका के अनेक कार्यों में **देश का प्रशासन चलाना** पहला और सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। सरकार को **आंतरिक शांति व व्यवस्था** सुनिश्चित करनी और बनाए रखनी पड़ती है। कार्यपालिका को **विदेश-संबंधों का संचालन करना**, दूसरे देशों से **समझौते करना**, **युद्ध की घोषणा करना** व शांति-संधि करना, फौजों को लामबंद करना, आवश्यक होने पर **आपातकाल की घोषणा करना**, मुद्रा का पुनर्मूल्यन व अवमूल्यन करना, आवश्यक वस्तुओं के दाम तय करना तथा देश की जनता के कल्याण से जुड़े दूसरे कार्यकलाप भी संपन्न करना पड़ता है।

हाल में कार्यपालिका ने कुछ विधायी काम करने भी शुरू कर दिए हैं भले ही यह उसके कार्यक्षेत्र में नहीं आता। कानूनों की रूपरेखा तैयार करके उसे विधायिका के आगे रखने में कार्यपालिका पर्याप्त पहल कर रही है। यह बात ब्रिटेन और भारत जैसी संसदीय सरकारों के लिए खासकर सही है। भारत में विधायिका का सत्र न चल रहा हो तो कार्यपालिका अध्यादेश जारी कर **कानून बना**

सकती है। विधायिका द्वारा पारित विधेयक को राज्य-प्रमुख स्वीकृति देने से इंकार भी कर सकता है। अमेरिका तक में, जहाँ शक्तियाँ विभाजित हैं, राष्ट्रपति अपने 'संदेश' भेजकर या अपने 'मित्रों' की सहायता से कांग्रेस से एक विधेयक पारित कराकर विधायिका को प्रभावित कर सकता है।

कार्यपालिका के कार्यों में वृद्धि प्रत्यायोजित विधि-निर्माण (डेलीगेटेड लेजिस्लेशन) की वृद्धि का परिणाम भी है। संसद के बनाए कानूनों में आमतौर पर ब्यौरे नहीं होते। बाद में इस कमी को कार्यपालिका दूर करती है।

कार्यपालिका कुछ न्यायिक कार्य भी करती है। सभी देशों में राज्य-प्रमुख को **अपराधियों को क्षमा-दान करने**, सज़ा कम करने या रिहा करने का अधिकार प्राप्त होता है। इसे उसका 'दया का विशेषाधिकार' कहते हैं। वह **न्यायाधीशों की नियुक्ति** भी करता है। बहुत से विवाद प्रशासनिक पंचाटों (ट्रिब्यूनल्स) द्वारा हल किए जाते हैं। कुछ देशों में मंत्रियों को अपील की पंचाटों की तरह काम करने का अधिकार प्राप्त होता है। फ्रांस में प्रशासनिक कानूनों और अदालतों की एक अलग व्यवस्था है।

कार्यपालिका **'राष्ट्र के कोष'** को भी नियत्रित करती है। कार्यपालिका ही **बजट तैयार** करके मंजूरी के लिए सदन के सामने रखती है। वास्तव में कार्यपालिका ही देश में **करों का ढाँचा तय** करती है; संसद केवल उसे अपनी स्वीकृति देती है। संसद द्वारा पारित किए जाने के बाद बजट के प्रावधान लागू हों, इसे भी कार्यपालिका ही सुनिश्चित करती है। इसके लिए कार्यपालिका के पास लेखा-परीक्षण के अनेक संगठन होते हैं जो देश के वित्तीय पहरेदारों का काम करते हैं।

नौकरशाही अर्थात् स्थायी कार्यपालिका निर्णय-प्रक्रिया के एक-एक चरण से जुड़ी होती है और प्रशासन में निरंतरता बनाए रखती है। अकसर राजनीतिक कार्यपालक नौकरशाही की तकनीकी विशेषज्ञता और ज्ञान के कारण उस पर निर्भर होते हैं।

अपनी रचना *द फंक्शंस ऑफ द एक्जीक्यूटिव* में **चेस्टर बर्नार्ड** ने कार्यपालिका के कार्यकलाप का संबंध 'उद्देश्यों की दृढ़ता, नीति-निर्माण के आरंभ, साधनों के उपयोग, कामकाज के साधनों के नियंत्रण, काम की प्रेरणा तथा समन्वित कार्य को प्रेरणा' से जोड़ा है।

17.3.4 कार्यपालिका की बढ़ती भूमिका

आज प्रतिनिधिक लोकतंत्र की जगह एक हद तक उस चीज ने ले ली है जिसे **आर एच. एच. क्रासमैन** के शब्दों में 'कार्यपालक लोकतंत्र', बल्कि 'नौकरशाही लोकतंत्र' भी कहा जा सकता है। कार्यपालिका राजनीतिक संगठन का सबसे महत्वपूर्ण अंग है। **रोड्री** ने कहा है, 'एक तरफ तो प्रतिनिधि सभाओं की बुद्धिमता वे सामर्थ्य संबंधी पहले वाला उत्पाद कम हुआ है तो दूसरी तरफ जनता द्वारा निर्वाचित कार्यपालक शक्ति के कोई एक सदी के अनुभवों ने पहले के संदेहों को दूर करके भरोसा पैदा किया है। इसके अलावा लोकतांत्रिक सरकारों की तेज़ी से बढ़ती समस्याओं और कार्यकलापों ने विधायिका की अनेक शक्तियों को कार्यपालिका के हवाले करने की मज़बूरी सी पैदा कर दी है।' संसदीय लोकतंत्रों की स्थिति खास तौर पर ऐसी ही है। विधायिका के निचले सदन में अपने बहुमत के कारण राजनीतिक कार्यपालिका सारे कानून पारित करा लेती है। ब्रिटेन की तरह के सख्त दलीय अनुशासन के कारण कार्यपालिका पर विधायिका का नाम-मात्र का नियंत्रण रह जाता है। फिर कार्यपालिका भी आमतौर पर एकजुट होती है जबकि विधायिका के सदस्य दलगत आधारों पर बंटे होते हैं, और इसके कारण कार्यपालिका को उन पर वर्चस्व प्राप्त होता है। शासन के अंग्रेजी मॉडल के बारे में **ग्रीव्ज** ने जो कुछ कहा है वह दूसरे देशों की व्यवस्थाओं पर भी बड़ी हद तक लागू होता है - यह कि कार्यपालिका *'व्यवहार में हमारे विधि-निर्माणतंत्र का पहला सदन बन चुकी है।'*

फिर भी कार्यपालिका के नेतृत्व पर अंकुश समय की माँग है। राजनीतिक व्यवस्था का भाग्य उन राजनेताओं की भूमिका पर निर्भर है जो एक शासन की स्थापना, संचालन और स्थायित्व के लिए जिम्मेदार कहे जाते हैं। इसलिए आवश्यकता कार्यपालिका की सत्ता पर समुचित अंकुश लगाने की

है। इसके कारण वह दक्षता के साथ काम करेगी और सौंपे गए अनेकानेक कार्यों को सही ढंग से पूरा करेगी। इन कार्यों में, एडलई स्टीवेंसन के शब्दों में, 'एक कल्याणकारी सेवा की स्थापना, समाज-कल्याण को पूरी जनता के लिए विस्तार देना तथा करुणा की पुनर्स्थापना' शामिल हैं।

बोध प्रश्न 1

नोटः क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।
ख) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) संसदीय व राष्ट्रपतीय कार्यपालिकाओं के प्रमुख अंतर स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

2) कार्यपालिका के किन्हीं दो कार्यों का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

3) आज कार्यपालिका क्यों अधिक शक्तिशाली बन चुकी है?

.....

.....

.....

17.4 विधायिका

तुलनात्मक राजनीतिशास्त्र में विधायिका को तकनीकी रूप से नियम-निर्माता विभाग कहा जाता है। विधायिका, जिसके लिए संसद नाम सबसे अधिक प्रचलित है, राजनीतिक संगठन का सबसे महत्वपूर्ण अंग है। 'पार्लियामेंट' शब्द का अर्थ 'बातचीत' है। यह फ्रांसीसी शब्द 'पार्ले' और लातीनी शब्द 'पार्लियामेनूनी' के व्युत्पन्न है। कानून बनाना आज की विधायिकाओं का सबसे अहम काम है और अक्सर उन्हें उनके बनाए कानूनों की गुणवत्ता से ही पहचाना जाता है। फिर भी आज विधायिका को 'राष्ट्र का दर्पण', 'समुदाय की सामान्य इच्छा का साकार रूप', 'शिकायतों की समिति', 'रायों की कांग्रेस' आदि करने वाली आदर्शमूलक व्याख्याओं की जगह अनुभवाश्रित वक्तव्यों ने ले ली है जिनमें एक 'बातचीज के अड्डे', शोषण और दमन के साधन, एक 'मृत निकाय' आदि के रूप में उनके वास्तविक महत्व का संकेत दिया जाता है।

17.4.1 जनता का प्रतिनिधित्व

आधुनिक राज्यों में यूनानी नगर-राज्यों का प्रत्यक्ष लोकतंत्र असंभव है। इसलिए लोकतंत्र में जनता शासन के कामकाज चलाने के लिए अपने प्रतिनिधि चुनती है। प्रतिनिधित्व वास्तव में 'वह प्रक्रिया है जिसके जरिये पूरे नागरिक समुदाय या उसके एक भाग के रुझान, वरीयताएँ, दृष्टिकोण व मनोरथ उनकी स्पष्ट स्वीकृति के साथ उनकी तरफ से, और उनमें से एक छोटे समूह के हाथों, सरकारी कार्रवाई का रूप लेते हैं और यह उन पर लागू होती है जिनका प्रतिनिधित्व किया जा रहा

है।' माना जाता है कि विधायिकाएँ जनमत को प्रतिबिंबित करती हैं। परिवर्तन के लिए निश्चित अंतरालों पर चुनाव कराए जाते हैं। जनता के जो भाग समुचित प्रतिनिधित्व नहीं पाते उनके लिए आरक्षण या कार्यात्मक प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की जाती है। उदाहरण के लिए भारत में विधायिका में और नौकरशाही में भी अनुसूचित जातियों व जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित किए जाते हैं।

संसदीय लोकतंत्र में कार्यपालिका जनता द्वारा निर्वाचित होती है और जनता की प्रभुतासंपन्न इच्छा को व्यक्त करने की दावेदार विधायिका होती है। अलोकतांत्रिक राज्यों तक में कार्यपालिका ऐसे व्यक्ति-समूह पर भरोसा करती है जो उनकी राय में जनता की इच्छा को व्यक्त कर सकते हैं।

17.4.2 विधायिका का गठनः एकसदनीय और दो-सदनीय

विधायिकाएँ या तो **एक-सदनी** या **दो-सदनी** होती हैं। व्यवहार में दो सदनी व्यवस्था को अधिक महत्व प्राप्त है। **एक-सदनी** व्यवस्था में विधायिका का केवल एक सदन होता है। यह **जनप्रतिनिधित्व पर आधारित** होता है और **विधि-निर्माण** की पूरी जिम्मेदारी इसी पर होती है। एक-सदनी विधायिकाएँ न्यूज़ीलैण्ड, डेनमार्क, फिनलैण्ड और चीन जैसे कुछ देशों में पाई जाती हैं। ये पंजाब, हरियाणा, उड़ीसा और केरल जैसे कुछ भारतीय राज्यों में भी मौजूद हैं।

दो-सदनी विधायिका में दो सदन होते हैंः (अ) **ऊपरी सदन** और (ब) **निचला सदन**। आमतौर पर निचला सदन अधिक प्रतिनिधिक होता है और विधि-निर्माण में इसे अधिक अधिकार प्राप्त होते हैं। निचले सदन सीधे निर्वाचित होते हैं, जैसे भारत, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी आदि में। कुछ देशों में ऊपरी सदन भी सीधे चुने जाते हैं, जैसे अमेरिका में सीनेट। ब्रिटेन में ऊपरी सदन अर्थात् हाऊस ऑफ लार्ड्स के सदस्य नामजद होते हैं। भारत में राज्यसभा नाम का ऊपरी सदन अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होता है। दो सदनी व्यवस्था में **दलगत राजनीति** बहुत चलती है तथा विधि-निर्माण की प्रक्रिया बहुत अधिक पेचीदा होती है क्योंकि विधेयकों पर दोनों सदनों की सहमति आवश्यक होती है। संघ की सदस्य इकाइयों को ऊपरी सदन में प्रतिनिधित्व प्राप्त होता है। इससे संसद में उनका दृष्टिकोण पहुँचता रहता है और वे अपने अधिकारों की सुरक्षा भी कर सकती हैं। दो सदनी व्यवस्था केन्द्र और संघ की सदस्य इकाइयों के बीच आसानी से संतुलन बनाए रखती है जो संघीय व्यवस्था के सफल कार्यकलाप के लिए बहुत आवश्यक है।

कुछ ऊपरी सदनों में (जैसे भारत में) साहित्य, कला, विज्ञान और समाज-सेवा को प्रतिनिधित्व देने के लिए विद्वान और सुख्यात व्यक्तियों को मनोनीत करने की व्यवस्था भी है। भारत में राष्ट्रपति राज्यसभा में 12 सदस्य मनोनीत कर सकता है। इस तरह कुल मिलाकर विधायिका उनके अनुभवों और बुद्धि से लाभान्वित हो सकती है। वास्तव में ऊपरी सदन जनता द्वारा निर्वाचित निचले सदनों पर अंकुश लगा सकते हैं। लेकिन व्यवहार में यह बताना बहुत कठिन है कि क्या ऊपरी सदन सचमुच अधिक गंभीर, कम पक्षपाती और राज्यों के अधिकारों के बेहतर संरक्षक हैं। अनेक राज्यों में उनकी उपयोगिता की बजाय उनके अस्तित्व का औचित्य परंपरा प्रदान करती है।

17.4.3 विधायिका के कार्य

क्रियात्मक दृष्टिकोण से विधि-निर्माता निकायों के स्थान और महत्व 'प्रभुतासंपन्न' ब्रिटिश पार्लियामेंट से लेकर भूतपूर्व सोवियत संघ की प्रभुताहीन सर्वोच्च सोवियत तक, अमेरिका की 'शक्तिशाली' कांग्रेस से लेकर स्पेन की कोर्तिस अर्थात् 'शासक की हाँ में निरीह ढंग से हाँ मिलाने वाली' संस्था तक अलग अलग होते हैं। विधायिकाओं के कार्यों का एक समन्वित लेखाजोखा लेते हुए कर्टिस ने इन्हें इस प्रकार रखा हैः

1) विधायिकाएँ राज्य-प्रमुख का चयन करती हैं, महाभियोग चलाकर उसे हटा सकती हैं, या उसके उत्तराधिकार या चुनाव संबंधी कानून को बदल सकती हैं। मिसाल के लिए ब्रिटिश पार्लियामेंट उत्तराधिकार के कानून या सत्ता-त्याग की विधि को बदल सकती है। भारत और इज़राइल की संसदें राष्ट्रपति का चुनाव करती हैं, और अमेरिका में अगर राष्ट्रपति के चुनाव

में कोई भी उम्मीदवार स्पष्ट बहुमत नहीं पाता तो प्रतिनिधि सभा को राष्ट्रपति चुनने का अधिकार है। अमेरिका और भारत की विधायिकाएँ महाभियोग चलाकर अपने राष्ट्रपतियों को हटा भी सकती हैं। कनाडा, न्यूज़ीलैण्ड और ऑस्ट्रेलिया की संसदें ब्रिटेन की रानी/राजा के आगे तीन नामों की सिफारिश करती हैं तथा राजा या रानी द्वारा उनमें से किसी एक को संबंधित देश का गवर्नर-जनरल नियुक्त किया जाता है।

2) कुछ देशों में विधायिकाएँ प्रधानमंत्री व उसके मंत्रियों के चयन का अनुमोदन भी करती हैं। अमेरिका में राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत सभी मंत्रियों (सचिवों) का सीनेट द्वारा अनुमोदन आवश्यक है। इज़राइल में नेस्सेत (संसद) मंत्रिमंडल के सदस्यों की सूची का अनुमोदन करती है। स्विट्जरलैण्ड की फेडरल असेंबली फेडरल कौंसिल के सात प्रेसिडेंट चुनती है। जापान में सम्राट द्वारा नामजद प्रधानमंत्री का डायट (संसद) द्वारा अनुमोदन आवश्यक है। फ्रांस में राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत प्रधानमंत्री को संसद में विश्वास मत प्राप्त करना पड़ता है। ब्रिटेन और भारत जैसे देशों में जहाँ मंत्रिमंडलीय शासन प्रणाली है, मंत्रीगण तभी तक अपने पद पर रहते हैं जब तक उन्हें विधायिका का विश्वास प्राप्त हो। हाल में वाजपेयी सरकार संसद में विश्वास का मत प्राप्त नहीं कर सकी। सैद्धान्तिक अर्थ में यही प्रावधान रुस और चीन जैसे देशों पर भी लागू होता है।

3) विधायिकाएँ सरकार के व्यवहार को भी प्रभावित या नियंत्रित कर सकती हैं, या कार्यपालिकाओं को जवाबदेह बना सकती हैं। अविश्वास प्रस्ताव, भर्त्सना प्रस्ताव, विप्रश्न (इंटरपेलेशन) की प्रक्रिया, सरकार के बजटों तथा प्रमुख नीतियों पर बहस, महाभियोग की प्रक्रिया आदि अनेक ऐसे साधन हैं जिनके द्वारा सांसद सरकार पर नियंत्रण स्थापित कर सकते हैं। अमेरिकी कांग्रेस ने 1998 में बिल क्लिंटन के खिलाफ महाभियोग चलाया। ब्रिटेन में 1949 में प्रधानमंत्री पद से एटली, 1956 में इडेन और 1968 में मैकमिलन के निष्कासन इसी तथ्य की पुष्टि करते हैं कि संसद के हाथ में नियंत्रण की शक्ति है। इस तरह विधायिकाएँ कुछ न्यायिक कार्य भी करती हैं। भारत में उन्हें राष्ट्रपति, सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश आदि पर महाभियोग चलाने का अधिकार प्राप्त है।

4) विधायिकाएँ अपने पदाधिकारी चुन सकती और उन्हें हटा भी सकती हैं। वे साबित 'दुर्व्यवहार' या भ्रष्टाचार या देशद्रोह या विशेषाधिकारों के हनन के आरोप में उन्हें सदस्यता से वंचित भी कर सकती हैं। विधायिकाएँ ही स्पीकर और डिप्टी स्पीकर चुनती हैं तथा अविश्वास प्रस्ताव के जरिये उन्हें हटा सकती हैं।

5) विधायिकाओं का सबसे अहम काम नियम बनाना है क्योंकि ये ही सरकार के नियम-निर्माता विभाग हैं। विधेयक पेश किए जाते हैं, उन पर बहसें होती हैं और फिर वे संशोधनों के साथ या उनके बिना पारित किए जाते हैं। 'लोकतांत्रिक' विधायी कामकाज वाले अधिकांश देशों में विधेयकों का तीन-तीन बार वाचन होता है। अकसर विधेयकों को और विस्तृत छानबीन के लिए संसदीय समितियों के हवाले कर दिया जाता है। चीन जैसे कम्युनिस्ट देश में विधायिका नहीं बल्कि उसकी एक छोटी सी समिति ही शासक पार्टी के अगोच इशारे पर पहले विधेयक को पारित करती है, और फिर उसे विधायिका में पारित कराया जाता है। संसद का सत्र जब न जारी हो तब राज्य के प्रमुख द्वारा जारी अध्यादेश को सत्र के आरंभ से छः सप्ताह के अंदर विधायिका में अनुमोदित कराना पड़ता है।

6) एक विधायिका अकसर **राजकोष** को भी **नियंत्रित** करती है। **वार्षिक बजट** पर या **नए कर** लगाने के लिए उसका **अनुमोदन** आवश्यक है। समितियों के जरिये वह सरकार के व्यय की जाँच-परख भी करती है। भारत में यह काम लोक लेखा समिति (पब्लिक एकाउंट्स कमेटी, पी.ए.सी.) करती है।

विधायिकाएँ 'तनाव' भी कम करती हैं, आश्वस्त करती हैं तथा सामान्यतः सरकार की नीतियों व कार्यक्रमों पर संतोष का भाव जगाती हैं। वे हितों की अभिव्यक्ति की संभावना भी पैदा करती हैं। वे 'निकास का मार्ग' भी प्रदान करती हैं अर्थात् जब क्योंकि राजनीतिक व्यवस्था में गतिरोध आ गया है और सामान्य निर्णय-प्रक्रिया इस स्थिति से निकलने का मार्ग नहीं दिखाती तो ऐसे किसी

निर्णय के अंतःतत्व या स्वरूप या दोनों के लिए अभिजात वर्ग विधायिका से मदद मांगते हैं जो व्यवस्था को उस गतिरोध से निकाले। वे देश के भावी नेतृत्व के लिए प्रशिक्षणशाला के काम भी करती हैं। इसके अलावा वे 'सहमतिमूलक संस्थांगत निरंतरता' को बल पहुँचाती हैं और अकसर देश में प्रशासनिक विहंगावलोकन का एकमात्र साधन होती हैं।

विकासशील देशों में विधायिकाएँ इन्हीं कार्यों के कारण एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। मगर **पैकेनहैन** जैसे लेखक विधायिकाओं की अवरोधक भूमिका की बात भी करते हैं। वे 'लोकतांत्रिक राजनीति तक में पूरी दुनिया में कार्यपालिकाओं की अपेक्षा अधिक रुढ़िवादी व संकीर्ण हितों का प्रतिनिधित्व करती हैं। संसदीय के विपरीत राष्ट्रपतीय शासन प्रणाली में यह बात खास तौर पर सच दिखाई देती है। जिन समाजों में परिवर्तन की आवश्यकता और इच्छा है और जहाँ राजनीतिक आधुनिकीकरण की परिभाषा सतत रूपांतरण पैदा करने और उसे झेलने की इच्छा और क्षमता के रूप में की जा सकती है वहाँ जो संस्था परिवर्तन का विरोध करे उसकी निर्णयकारी शक्ति को बढ़ाने का कोई खास अर्थ नहीं होता।'

पूरी दुनिया में विधायिकाएँ काम में दक्षता और समय की बचत के लिए समिति व्यवसाय का उपयोग करती हैं। व्यवहार में विधायिका के निकाय को उसकी समिति से ही जाना जाता है। जैसा कि लेखक, **मोटे** का संकेत है: 'कुछ समितियों की सहायता के बिना कोई भी विधायिका कारगर ढंग से कामकाज नहीं कर सकती। ब्यौरों पर विचार-विमर्श एक बड़ी मीटिंग में असंभव है जो इतनी भारी-भरकम होती है कि मुख्य सिद्धान्तों के अलावा किसी बात पर बहस कर ही नहीं सकती। इसी कारण से सभी लोकतांत्रिक विधायिकाएँ विषयों पर विस्तृत विचार-विमर्श के लिए छोटे-छोटे समूहों का चुनाव करती हैं और ये समूह अपने विचार-विमर्श के परिणाम को निर्णय के लिए वृहत्तर निकाय के सामने लाते हैं।

17.4.4 विधायिका का ह्रास

विधायिकाओं के कार्यों और उनकी शक्तियों की आलोचनात्मक छानबीन से इस बात की पुष्टि होती है कि कार्यपालिकाओं में पुराने अविश्वास की जगह उनके नेतृत्व में एक नया विश्वास पैदा हुआ है। एक संसदीय शासन प्रणाली में प्रधानमंत्री के नेतृत्व में कार्यरत मंत्रिमंडल की मजबूत स्थिति **रैम्जे म्यूर** के इस विचार की पुष्टि करती है कि एक शक्तिशाली मंत्रिमंडल के उदय ने एक उल्लेखनीय सीमा तक संसद की शक्ति और स्थिति को कमज़ोर किया है, उसकी कार्यवाहियों का महत्व घटाया है, और ऐसा दिखने लगा है कि संसद मुख्य रूप से सर्वशक्तिमान **मंत्रिमंडल** की आलोचना ही करती रहती है। मंत्रिमंडल ऐसा प्रमुख मंच बनकर उभरा है जहाँ नीतियों पर विचार करके उन्हें अंतिम रूप दिया जाता है जबकि संसद उन पर कमोबेश एक औपचारिकता के रूप में बहस करती है। संसद में अगर मंत्रिमंडल को पूर्ण बहुमत प्राप्त हो तो वह इस स्थिति में भी नहीं होती कि इन नीतियों को बदल सके। संसदीय शासन प्रणाली में आखिरी आवाज़ मंत्रिमंडल की ही होती है। यह बात अंग्रेजी मॉडल पर आधारित सभी विधायिकाओं पर लागू होती है। एक ओर राष्ट्रपति के अंकुश तथा दूसरी ओर न्यायिक समीक्षा की शक्ति के कारण अमेरिकी कांग्रेस अपनी विधायी स्वायत्तता को काफी हद तक खो चुकी है। कम्युनिस्ट देशों की विधायिकाओं को इतनी मामूली सत्ता भी प्राप्त नहीं; बल्कि उनका उपयोग प्रचार के कार्यों के लिए किया जाता है। वे 'राजनीतिक व्यवस्था में कहीं और किए गए फैसलों पर मुहर' लगाती हैं।

विधायिका के ह्रास के आरोप की पुष्टि निम्नलिखित बातों से होती है। **एक**, जो सत्ता मूलतः विधायिकाओं के हाथ में होती थी उसे कार्यपालिकाओं ने छीन लिया है। बहुत सारी बातों का फैसला मंत्रिमंडल करता है, जैसे संसद का सत्र बुलाना और विसर्जित करना, राज्य के प्रमुख द्वारा दिए जाने वाले उद्घाटन भाषण का पाठ लिखना, सदन के सत्र की समय-सारणी तैयार करना और ऐसे बहुत से दूसरे कार्य करना जो संसद के कार्यकलाप के अंग होते हैं। अमेरिका जैसे देश में विधायिका भले ही कार्यपालिका से अलग हो, राष्ट्रपति कांग्रेस द्वारा पारित किसी विधेयक को अपनी सोच के अनुसार रद्द कर देता है। वह कांग्रेस को 'संदेश' भी भेज सकता है और अपने

'मित्रों' की सहायता से कुछ विधेयक पारित करा सकता है। फ्रांस जैसे एक देश में जहाँ हमें संसदीय व राष्ट्रपतीय प्रणालियों का मिश्रण दिखाई देता है, राष्ट्रपति तो संसद को भंग करने की सीमा तक भी जा सकता है।

दूसरे, किसी विधेयक की संविधानिक वैधता को परखने की अदालतों की शक्ति ने भी विधायिकाओं की शक्ति को प्रभावित किया। यह बात ब्रिटेन पर लागू नहीं होती, लेकिन अमेरिका पर होती है जहाँ संघीय न्यायपालिका को न्यायिक समीक्षा की शक्ति दी गई है। इसके अंतर्गत संघीय न्यायपालिका अगर किसी कानून को देश के संविधान के अनुकूल नहीं पाती या उससे संविधान का हनन होते देखती है तो उसे रद्द घोषित कर सकती है।

आखिरी बात। आधुनिक विधायिकाओं की सत्ता को वास्तव में जिस चीज ने कमज़ोर किया है वह दलगत राजनीति की भूमिका। पार्टी के सर्वोच्च नेता सदस्यों को सख्त नियंत्रण में रखते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि सदस्यों के पास आधिकारिक लाइन को मानने के अलावा और कोई रास्ता नहीं बचता।

हालांकि विधायिकाओं की शक्ति और प्रतिष्ठा में कमी आ रही है, पर फिर भी वे कम या अधिक शक्ति के साथ काम कर ही रही हैं। हरेक राजनीतिक व्यवस्था में विधायिका को आज भी एक औपचारिक केन्द्र के रूप में महत्व दिया जाता है। इसलिए यह बात सही ही कही गई है कि 'ह्रास तो देखनेवाले की निगाह में है और उसके विश्लेषण के परिप्रेक्ष्यों पर निर्भर है।'

बोध प्रश्न 2

नोटः क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) एक सदनी और दो सदनी विधायिकाओं में उदाहरण देकर अंतर बतलाइए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) विधायिकाओं के कोई तीन कार्य बतलाइए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) विधायिकाओं के ह्रास के कारण बतलाइए।

.....

.....

.....

.....

.....

17.5 न्यायपालिका

बहुत सीधे-सादे शब्दों में कहें तो न्यायपालिका की परिभाषा, जिसे सरकार का नियमों का फैसला करने वाला विभाग भी कहा जाता है, सरकार के उस तीसरे अंग के रूप में की जा सकती है जिसका काम न्याय करना है। यह कानूनों की व्याख्या करती है तथा कानूनों के हनन पर दंड देती है। व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा करना किसी राजनीतिक व्यवस्था का प्रमुख उद्देश्य होता है, और यह काम सरकार का न्यायिक अंग करता है।

17.5.1 न्यायपालिका के कार्य

न्यायाधीश राज्य के प्रमुख द्वारा नामजद हो सकते हैं या एक चयन-प्रक्रिया के द्वारा नियुक्त हो सकते या फिर साथ के न्यायाधीशों द्वारा निर्वाचित या सहयोजित (को-आप्टेड) हो सकते हैं।

अलग-अलग राजनीतिक व्यवस्थाओं में न्यायपालिका के कार्य अलग-अलग होते हैं, पर आम तौर पर ये कार्य इस प्रकार होते हैं।

न्याय प्रदान करना न्यायालयों का पहला और सबसे महत्वपूर्ण कार्य है। न्यायालय दीवानी, फौजदारी और संविधानिक प्रकृति के सभी मामलों की सुनवाई और फैसला करते हैं। लिखित संविधान वाले देशों में न्यायालयों को संविधान की व्याख्या की शक्ति भी प्राप्त होती है। वे संविधान के रक्षक के काम करते हैं।

दूसरी बात, वैसे तो कानून बनाना विधायिकाओं का काम है, पर एक भिन्न ढंग से न्यायालय भी कानून बनाते हैं। जहाँ कोई कानून खामोश या अस्पष्ट हो वहाँ अदालतें तय करती हैं कि **कानून क्या है और कैसे लागू होना चाहिए।**

तीसरी बात, एक संघीय शासन प्रणाली में अदालतें **केन्द्रीय व क्षेत्रीय सरकारों के बीच एक स्वतंत्र और निष्पक्ष अंपायर की भूमिका भी निभाती हैं।**

चौथी बात, न्यायालय सरकार के कार्यों को वैधता देने वाले महत्वपूर्ण संगठन हैं। न्यायालयों से आशा की जाती है कि वे खुद को जनता की बढ़ती आकांक्षाओं से बाखबर रखेंगे और मौजूदा स्थिति की रौशनी में कानून के अर्थ की गतिशील ढंग से व्याख्या करेंगे। उन्हें यह देखना होगा कि कोई कानून या कार्यपालिका का कोई काम जनता के विभिन्न अधिकारों का हनन न करे।

पाँचवी बात, न्यायालयों को विद्यमान राजनीतिक व्यवस्था को स्थायी बनाना और अवलंब देना भी होता है। न्यायालयों का व्यवहार बाधामूलक या विनाशकारी नहीं होना चाहिए कि वहीं राजनीतिक संगठन का सुचारु संचालन समस्या न बन जाए।

न्यायालयों का सबसे विवादास्पद कार्य उनका **न्यायिक समीक्षा का अधिकार** है जिसके अंतर्गत उन्हें किसी विधायी या प्रशासनिक कदम की वैधता की छानबीन की और फिर उसे अंशतः या पूर्णतः संविधान के प्रतिकूल घोषित करने की क्षमता प्राप्त होती है। इस शक्ति का जन्म अमेरिका में हुआ और वहीं यह अपने सर्वोत्तम रूप में दिखाई भी पड़ती है। इसका दूसरा सर्वोत्तम उदाहरण भारत में देखने को मिलता हे। इटली, ऑस्ट्रेलिया और दक्षिण अफ्रीका जैसे कुछ अन्य देशों में इसे कुछ मद्धम रूपों में देखा जा सकता है।

जैसा कि कहा गया है, न्यायालयों के कार्य अलग-अलग देशों में अलग-अलग होते हैं। फिर भी, जैसा कि ऊपर बतलाया गया है, इनमें से अधिकांश कार्य साझे हैं तथा ये ही कार्यपालिका/विधायिका और न्यायपालिका की शक्तियों में अंतर की रेखा खींचते हैं।

17.5.2 न्यायिक समीक्षा और न्यायिक सक्रियता

इनसाइक्लोपेडिया ब्रिटानिका ने न्यायिक समीक्षा की परिभाषा इस प्रकार की हैः 'किसी देश के न्यायालयों की यह शक्ति कि सरकार के विधायी, कार्यकारी और प्रशासनिक अंगों के कार्यों की

जाँच-परख करके वे यह सुनिश्चित करें कि ये कार्य राष्ट्र के संविधान के प्रावधानों से मेल खाते हैं।' कर्म्यूसन और मैकहेनर ने न्यायिक समीक्षा की यह परिभाषा की है: 'किसी न्यायालय की यह शक्ति कि वह किसी कानून या शासकीय कार्य को असंविधानिक ठहरा सके जो उसे बुनियादी कानून या संविधान से टकराता हुआ दिखाई दे।' इस तरह न्यायिक समीक्षा न्यायालयों की यह शक्ति है कि वे किसी विधायी या प्रशासनिक कदम की संविधानिक वैधता की छानबीन करके उसके संविधान के अनुकूल या प्रतिकूल होने संबंधी निर्णय दे सकते हैं।

न्यायिक समीक्षा का अध्ययन दुनिया के मुख्यतः दो ही लोकतांत्रिक देशों को लेकर किया जाता है। ये हैं **अमेरिका** और **भारत**। दोनों के पास लिखित संविधान और संघीय शासन प्रणालियाँ हैं। अमेरिका और भारत, दोनों के सर्वोच्च न्यायालय न्यायपालिका की सर्वोच्चता को मान्यता देते हैं। अमेरिका में अगर कोई कानून 'समुचित वैधानिक प्रक्रिया' की आवश्यकताओं को पूरा न करे तो अमेरिकी न्यायापालिका उसे असंविधानिक भी घोषित कर सकता है। 'समुचित प्रक्रिया' की धारा और 'न्यायपालिका की सर्वोच्चता' ने अमेरिकी सर्वोच्च न्यायालय को एक प्रकार की सर्वोच्च विधायिका बना दिया है। कम्युनिस्ट देशों में न्यायिक समीक्षा की कोई संभावना नहीं है। वहाँ न्यायाधीश विधायिकाओं द्वारा निर्वाचित होते हैं तथा उनहें 'जनता की इच्छा' का सम्मान करना पड़ता है। ब्रिटेन में भी न्यायालय प्रभुता संपन्न संसद द्वारा पारित किसी विधेयक की संविधानिक वैधता की जाँच-परख नहीं कर सकते। लेकिन वे **प्रत्यायोजित विधि-निर्माण** (डेलीगेटेड लेजिस्लेशन) के बारे में न्यायिक समीक्षा की शक्ति का व्यवहार कर सकते हैं। अगर कार्यपालिका का कोई काम शाब्दिक या तात्विक अर्थ में संसद के किसी कानून का हनन करता है तो न्यायालय उसे रद्द कर सकते हैं। **स्विट्जरलैण्ड** में **फेडरल ट्रिब्यूनल** को न्यायिक समीक्षा की शक्ति प्राप्त है जिसका व्यवहार वह केवल कैंटन की विधायिकाओं के बनाए कानूनों पर कर सकता है। **जापानी संविधान** की **धारा 81** भी सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक समीक्षा का अधिकार देती है।

न्यायालयों की न्यायिक समीक्षा की शक्ति ने उस चीज को जन्म दिया है जिसे इधर **न्यायिक सक्रियता** *(ज्यूडिशियल एक्टिविज्म)* कहा गया है। हाल के वर्षों में कभी-कभी कार्यपालिका में एक शून्य पैदा होता रहा है और अनेक अवसरों पर इस शून्य को न्यायपालिका ने भरा है। भारत में इस दिशा में पहला कदम आपातकाल के बाद उठाया गया जब सर्वोच्च न्यायालय ने सुविधाहीन और सीमांत वर्गों को न्याय सुनिश्चित करने के साधन के रूप में **जनहित याचिकाओं** (पी.आई.एल.) को मान्यता दी। भारत में सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों के हाल के कुछ आदेश न्यायिक सक्रियता के कुछ उदाहरण हैं, जैसे दो पहिया वाहनों में ड्राइवरों के लिए हेलमेट का अनिवार्य प्रयोग, पेड़ों की कटाई पर प्रतिबंध, 15 या 20 वर्ष से अधिक पुराने वाहनों पर प्रतिबंध, और देहली में सड़क किनारे होर्डिंग लगाने पर प्रतिबंध। अमेरिकी सर्वोच्च न्यायालय का गर्भपात पर प्रतिबंध संबंधी फैसला भी यही दिखाता है कि इन देशों में न्यायपालिका कितनी सक्रिय बन चुकी है।

कहा जाता है कि न्यायिक समीक्षा अधिकाधिक न्यायिक बहसों का दरवाजा खोलती है और वकीलों के लिए एक 'स्वर्ग' पैदा करती है। यह कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच टकराव को जन्म देती है। यह अदालतों को 'तीसरा सदन' या 'विधायिका का सर्वोच्च सदन' जैसा बना देती है। इस तरह न्यायपालिका का राजनीतिकरण होता है जो जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों की शक्ति को कम करता है। दूसरी ओर न्यायपालिका ठीक इसी शक्ति के सहारे कार्यपालिका या विधायिका की निरंकुशता से जनता की रक्षा कर सकती है। इस तरह सही तौर पर कहा गया है कि 'न्यायालय राजनीतिक प्रक्रिया के अंग हैं तथा हमें सहयोग को टकराव जितना ही महत्व देना चाहिए। वे राजनीतिक व्यवस्था के दूसरे अंगों के साथ अंतःक्रिया करते हैं - अवैध अजनबियों के रूप में नहीं बल्कि स्थायी शासन के राजनीतिक गठजोड़ के अंग के रूप में।'

17.5.3 न्यायपालिका की स्वतंत्रता

न्यायपालिका की बेपनाह शक्तियों और कार्यों के कारण पूरे राष्ट्र का कल्याण और उसके अधिकारों का संरक्षण न्यायालयों का दायित्व बन जाता है। इसलिए इन कार्यों को सुचारु ढंग से संपन्न करने के लिए उसका स्वतंत्र और निष्पक्ष होना आवश्यक है। भले ही (स्विट्जरलैण्ड और अमेरिका जैसे) कुछ देशों में न्यायाधीश निर्वाचित होते हों, पर दूसरे अधिकांश देशों में वे कार्यपालिका द्वारा नियुक्त किए जाते हैं। लेकिन एक बार नियुक्त होने के बाद उनको आसानी

से नहीं हटाया जा सकता जब तक कि दुराचरण या अयोग्यता के आरोपों में उन पर महाभियोग न चलाया जाए। उनके वेतन व सेवा की दशाओं पर कार्यपालिका या विधायिका का कोई नियंत्रण नहीं होता। एक न्यायाधीश को नियुक्त करते समय राष्ट्रपति दलगत हितों से नहीं बल्कि संबंधित व्यक्तियों की योग्यता और क्षमता से संचालित होता है। न्यायाधीशों के वेतन व भत्तों को कार्यपालिका या विधायिका के नियंत्रण से इसलिए बाहर रखा जाता है क्योंकि वे न्यायाधीशों के हितों के विरुद्ध बदले न जा सकें। भारत जैसे अनेक देशों में न्यायाधीशों को एक शपथ दिलाई जाती है ताकि वे भय, लोभ, राग-द्वेष से मुक्त रहकर यथासंभव अपनी योग्यता के अनुसार अपना कर्त्तव्य निभा सकें।

श्री अय्यर के शब्दों में भारतीय सर्वोच्च न्यायालय को 'दुनिया के किसी भी दूसरे सर्वोच्च न्यायालय से अधिक शक्तियाँ प्राप्त हैं।' भारत व अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालयों की तुलना से पता चलता है कि पहले वाले को निचली अदालतों के फैसलों के खिलाफ अपीलों की सुनवाई का अधिक अधिकार प्राप्त है। दूसरी तरफ अमेरिकी सर्वोच्च न्यायालय को भारतीय सर्वोच्च न्यायालय पर मौलिक न्याय-क्षेत्र संबंधी श्रेष्ठता प्राप्त है। संघ की इकाइयों के आपसी विवादों के समाधान के अलावा राजदूतों, वकीलों, मंत्रियों, संधियों, नौसेना और समुद्र संबंधी विषयों की सुनवाई भी इस मौलिक न्याय-क्षेत्र में आ जाती है। अपील पक्ष में भारतीय सर्वोच्च न्यायालय को उसके अमेरिकी समकक्ष से अधिक शक्तियाँ प्राप्त हैं जो संविधानिक मामलों को छोड़ दीवानी और फौजदारी के मुकद्दमों में अपीलों की सुनवाई नहीं करता। भारतीय सर्वोच्च न्यायालय का एक काम **परामर्श देना** भी है जो अमेरिकी सर्वोच्च न्यायालय का नहीं है। सबसे बड़ी बात यह है कि भारतीय सर्वोच्च न्यायालय एक **रिकार्ड रखनेवाला न्यायालय** भी है। अमेरिकी सर्वोच्च न्यायालय को ये विशेषधिकार प्राप्त नहीं हैं।

इस तरह एक देश की राजनीतिक प्रक्रिया में न्यायालयों की एक बहुत महत्वपूर्ण भूमिका होती है हालांकि राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति व जनता की संस्कृति के अनुसार उनकी भूमिका अलग-अलग हो सकती है। वास्तविक प्रशासकों और ईमानदार न्यायकर्ताओं के बीच सहयोग व टकराव साथ-साथ चलने चाहिए ताकि राजनीतिक व्यवस्था का आगे विकास हो और उसका क्षय न हो। सही तौर पर कहा गया है कि 'न्यायालय राजनीतिक प्रक्रिया के अंग हैं और हमें सहयोग को टकराव जितना ही महत्व देना चाहिए। वे राजनीतिक व्यवस्था के दूसरे अंगों के साथ अंतःक्रिया करते हैं - अवैध अजनबियों के रूप में नहीं बल्कि स्थायी शासन के राजनीतिक गठजोड़ के रूप में।'

बोध प्रश्न 3

नोटः क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) एक न्यायपालिका के मुख्य कार्य क्या-क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

2) अमेरिका का हवाला देते हुए न्यायिक समीक्षा की प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

3) किसी न्यायपालिका की स्वतंत्रता कैसे सुनिश्चित की जाती है?

.....

.....

.....

.....

17.6 साराश

किसी देश का शासन चलाने के लिए कानून बनाना, उन्हें लागू करना और उनकी व्याख्या करना आवश्यक होता है। ये काम क्रमशः विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के हैं।

कार्यपालिका में राजनीतिक कार्यपालिका और नौकरशाही शामिल हैं। यह कानूनों को लागू करती और प्रशासन चलाती है। संसदीय लोकतंत्रों में यही विधि-निर्माण की प्रक्रिया भी शुरू करती है। इन दिनों कार्यपालिका की भूमिका बहुत अधिक बढ़ चुकी है।

लोकतंत्र में विधायिका जनता द्वारा चुनी जाती व उनका प्रतिनिधित्व करती है। वह जनता की प्रभुसत्ता का प्रतिनिधित्व करने की दावेदार होती है। विधायिकाएँ एक सदन वाली या दो सदनों वाली हो सकती हैं। दो सदनों वाली विधायिकाएँ बेहतर होती हैं क्योंकि उनमें विशेष हितों का प्रतिनिधित्व करने की, मनमाने कानूनों के निर्माण पर रोक लगाने की और संघीय राज्यों में संघ की इकाइयों का प्रतिनिधित्व करने की अपेक्षा की जाती है। विधायिकाएँ सिर्फ कानून नहीं बनातीं। वे प्रशासन पर नियंत्रण भी रखती हैं और न्यायिक प्रकृति के कुछ काम भी अंजाम देती हैं। लेकिन हाल में दलगत टकराव, कार्यपालिका के प्रभुत्व तथा दूसरे कारणों से विधायिकाओं की भूमिका कम हुई है।

न्यायपालिका विवादों का निपटारा करती है तथा कानूनों और संविधान की व्याख्या करती है। यह व्यक्तियों के अधिकारों की रक्षा करती है और कानूनों व संविधान की संरक्षक होती है। उसे न्यायिक समीक्षा की शक्ति भी प्राप्त है जिसने हाल के वर्षों में न्यायिक सक्रियता को जन्म दिया है। इन सबके लिए उसका स्वतंत्र और निष्पक्ष होना आवश्यक है।

इस तरह शासन के इन सभी अंगों की अपनी-अपनी निश्चित भूमिकाएँ हैं। साथ ही वे एक दूसरे से जुड़े भी हैं। कोई राजनीतिक व्यवस्था उनके सामंजस्यपूर्ण कार्यकलाप से ही स्थायित्व और जीवनशक्ति प्राप्त करती है।

17.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

आल्मंड, जी. ए. और पावेल, सी. बी. (1975) : *कंपेरेटिव पालिटिक्सः ए डवलपमेंट एप्रोच,* नई दिल्लीः एमेरिंड पब्लिशिंग कंपनी।

एवस्टाइन, हैरी और ऐप्टर, डेविड (Ti) **(1963):** *कंपेरेटिव पालिटिक्स,* न्यूयार्कः द फ्री प्रेस।

क्रिक, बी. (1964) : *इन डिफेंस ऑफ पालिटिक्स,* हार्मंड्सवर्थः पेंग्विन।

डायट्श, के (1980) : *पालिटिक्स एंड गवर्नमेंट,* न्यूयार्कः हफ्टन मिफ्लिन।

ब्लम, डब्ल्यू टी. (1971) : *थ्योरिज ऑफ द पोलिटिकल सिस्टम,* इंगिलवुड क्लिफ्सः प्रेंटिस हाल।

17.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) **संसदीय** व **राष्ट्रपतीय शासन** आज **लोकतंत्र** के दो सबसे प्रचलित रूप हैं। एक संसदीय सरकार **कार्यपालिका** और **विधायिका** के अंतरंग संबंध पर आधारित होती है। वहीं **शक्तियों का अलगाव** राष्ट्रपतीय प्रणाली का आधार होता है। भारत व ब्रिटेन में संसदीय सरकारें हैं। यहाँ राज्य का प्रमुख नाम मात्र का कार्यपालक होता है जबकि व्यवहार में मंत्रिमंडल कार्यपालिका के वास्तविक कार्य करता है और विधायिका के आगे जवाबदेह होता है। अमेरिका राष्ट्रपतीय शासन प्रणाली की बेहतरीन मिसाल है जहाँ वास्तविक कार्यपालक अर्थात् राष्ट्रपति का कार्यकाल निश्चित होता है।

2) कार्यपालिका के कुछ कार्य इस प्रकार हैं: **आंतरिक व बाह्य नीतियाँ बनाना, कानून लागू करना, व्यवस्था बनाए रखना, मुद्रा पर नियंत्रण, युद्ध की घोषणा करना व शांति संधि करना। कार्यपालिका अकसर विधेयक तैयार करके उन्हें कानूनों का रूप दिलाती है।** वह राजकोष को नियंत्रित करती हैं, राजस्व उगाहती है और आर्थिक योजनाओं का संचालन करती है। राज्य का प्रमुख दया के विशेषाधिकार का प्रयोग करके अपराधियों को क्षमादान दे सकता है या उनकी सजाएँ कम कर सकता है। राजनीतिक कार्यपालिका नीतियाँ बनाती है जिन्हें फिर असैन्य अधिकारी लागू करते हैं।

3) अत्यंत परस्पर-निर्भर विश्व में कार्यपालिका हर जगह अधिक शक्तिशाली होती जा रही है। चूँकि वह बड़ी हद तक विधि-निर्माण, वित्त, युद्ध व शांति पर नियंत्रण रखती है, वह अधिक शक्तियाँ बटोरने लगती है। हर प्रमुख संकट कार्यपालिका को बल देता है कि वह अपनी सत्ता को जताए। विधायिका द्वारा पारित अनेक कानून कार्यपालिका को और अधिक शक्तियाँ प्रदान करते हैं।

बोध प्रश्न 2

1) आधुनिक लोकतांत्रिक विधायिकाएँ या तो *एक सदनी* हैं, जैसे चीन में जहाँ राष्ट्रीय जन कांग्रेस जनता की प्रतिनिधि है तथा कोई और सदन उसकी शक्तियों में साझीदार नहीं है, या *दो सदनी* है जिनमें विधायिका के दो सदन होते हैं। ब्रिटेन, अमेरिका, भारत, स्विट्जरलैण्ड आदि में दो सदनी विधायिकाएँ हैं। निचला सदन हमेशा जनता द्वारा निर्वाचित होता है। ऊपरी सदन ब्रिटेन की तरह मनोनीत, अमेरिका की तरह प्रत्यक्ष निर्वाचित या भारत की तरह अप्रत्यक्ष निर्वाचित हो सकता है। अमेरिका का सीनेट नामक ऊपरी सदन हाउस ऑफ रिप्रेजोटेटिव्स नामक निचले सदन से अधिक शक्तिशाली है। आमतौर पर निचला सदन (भारत में लोकसभा) ऊपरी सदन से अधिक शक्तिशाली होता है।

2) विधायिका का प्रमुख कार्य कानून बनाना और बजट पारित करना है। ब्रिटेन और भारत में विधायिका मंत्रियों को सीधे-सीधे नियंत्रित करती है क्योंकि निचला सदन प्रधानमंत्री तथा मंत्रीपरिषद को हटा सकता है। विधायिकाओं को कुछ निर्वाचन शक्तियाँ भी प्राप्त हैं। जैसे भारत में राष्ट्रपति का चुनाव संसद के दोनों सदनों व राज्य विधानसभाओं द्वारा किया जाता है। राष्ट्रपतियों व न्यायाधीशों को केवल महाभियोग चलाकर हटाया जा सकता है।

3) कार्यपालिका में पुराने अविश्वास की जगह उसके नेतृत्व में एक नया विश्वास जगा है। विधायिकाओं का आकार बड़ा होता है, वे अनेक मुद्दों पर बहस करती हैं व सामान्यतः काम के बोझ से दबी होती हैं। दलीय व्यवस्था अकसर कार्यपालिका को भारी शक्तियाँ देती है जो विधायिका में अपने सदस्यों तक को नियंत्रित करती है। एक दलीय राज्यों में शासन के सभी अंगों पर पार्टी का वर्चस्व होता है जिससे विधायिका का ह्रास होता है।

बोध प्रश्न 3

1) न्याय करना, विवादों को निपटाना और अपराधियों को दंड देना। एक संघीय प्रणाली में केन्द्र-राज्य विवादों का निपटारा सर्वोच्च न्यायालय करता है, जैसे अमेरिका और भारत में। ऊँची

अदालतें संविधान की रक्षा करती हैं और उसका हनन करनेवाले कानूनों को रद्द कर सकती हैं। अदालतें जनता के अधिकारों की रक्षा करती हैं तथा इसके लिए अकसर ऊँची अदालतें *समादेश (रिट)* जारी करती हैं।

2) न्यायपालिका को अधिकार होता है कि वह कानूनों व कार्यपालिका के आदेशों की समीक्षा व छानबीन करके देखें कि ये संविधान के अनुरूप हैं या नहीं। जो कानून पूर्णतः या अंशतः कानून का हनन करते हैं, न्यायपालिका उन्हें निरस्त या असंविधानिक करार देती है। किसी कानून या सरकारी आदेश को अवैध तथा संविधान के प्रतिकूल घोषित करने की शक्ति का आरंभ अमेरिका में 1803 में *मैरबरी बनाम मैडिसन* मुकद्दमें में हुआ। भारतीय सर्वोच्च न्यायालय भी अनेकों बार इस शक्ति का उपयोग करता है।

3) **न्यायाधीश** कार्यपालिका व विधायिका के नियंत्रण से मुक्त होने चाहिए। वे राज्य के प्रमुख द्वारा योग्यता के आधार पर नियुक्त होने चाहिए; उनका निश्चित व लंबा कार्यकाल होना चाहिए; आवश्यक यह है कि उन्हें आसानी से हटाया न जा सकें तथा उन्हें अच्छे वेतन और भत्ते मिलने चाहिए। भारत अमेरिका व अधिकांश लोकतांत्रिक देशों में न्यायपालिका को स्वतंत्रता प्राप्त है। वह संविधान के तथा जनता के अधिकारों व स्वतंत्रताओं के रक्षक का काम करती है।

बोध प्रश्न 4

1) पाश्चात्य शिक्षा के विस्तार, तथा उसके फलस्वरूप स्थानीय लोगों के प्रशासन में प्रवेश से उन्हें यह अनुभव हुआ कि वे स्वयं अपने भाग्य के विधाता हो सकते थे। इससे राष्ट्रीय चेतना का विकास हुआ। ***(कृपया विस्तृत विवरण के लिए भाग 17.5 देखें।)***

2) प्रत्येक देश के राष्ट्रीय आन्दोलन में प्रयोग किए गए साधन एक दूसरे से अलग थे। भारत में सामान्यतया शांतिपूर्वक, अहिंसात्मक विरोध किया गया। उधर इन्डोनेशिया (डच), तथा फ्रांसीसी हिन्द चीन में हिंसा पर आधारित साधनों का प्रयोग किया गया। ***(कृपया विस्तृत विवरण के लिए भाग 17.4 देखें।)***